जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

समताभाव की प्राप्ति का एकमात्र उपाय वृत्ति का स्वभावसन्मुख होना ही है।

ह्न बारह भावना एक अनुशीलन, पृष्ठ : 26

वर्ष : 27, अंक : 18 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
दिसम्बर (द्वितीय)2004 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी | वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

शिकोहाबाद (उ.प्र.) : यहाँ स्थानीय जैन स्ट्रीट में नवनिर्मित नेमिनाथ दिगम्बर जिनमंदिर में जिनबिम्ब स्थापना हेतु श्री कुन्दकुन्द कहान मंगल ट्रस्ट शिकोहाबाद द्वारा शुक्रवार, दिनांक 26 नवम्बर से गुरुवार, दिनांक 2 दिसम्बर, 2004 तक श्री 1008 नेमिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन किया गया।

दिनांक 29 नवम्बर को जन्मकल्याणक के अवसर पर शोभायात्रा नारायण डिग्री कॉलेज के क्रीड़ा स्थल से विभिन्न बाजारों में होती हुई पाली इण्टर कॉलेज पहुँची, जहाँ बालक नेमिकुमार का 1008 कलशों से जन्माभिषेक किया गया। इसी दिन रात्रि में मैनपुरी का 45 फीट का प्रसिद्ध पालना आकर्षण का केन्द्र रहा।

30 नवम्बर, 2004 को तपकल्याणक की क्रियाओं में वैराग्य शोभायात्रा निकाली गई, जो रामलीला ग्राउण्ड पहुँची। वहाँ दीक्षा वन में विशाल जनसमुदाय के बीच डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी एवं पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली का वैराग्यमय मार्मिक उद्बोधन हुआ। साथ ही बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद एवं सहयोगी विद्वानों द्वारा नेमिकुमार के केशलोंच आदि की क्रियायें सम्पन्न कराई गई।

दिनांक 1 दिसम्बर को समवशरण की रचना, दिव्यध्वनि प्रसारण तथा 2 दिसम्बर को गिरनारपर्वत की चोटी से नेमिनाथस्वामी को मोक्षप्राप्ति के उपरान्त देवों द्वारा हर्षविभोर होकर किया गया नृत्य और दीपावली का दृश्य भी कम आकर्षक नहीं था। इसी दिन दोपहर में स्व. श्री सुरेन्द्रकुमार जैन के सुपुत्र श्री अनिलकुमार जैन, रतन घी, शिकोहाबाद द्वारा प्रदत्त अष्टधातु से निर्मित 51 ईंच की भगवान नेमिनाथ की पद्मासन प्रतिमा मुख्य वेदी पर विराजमान की गई। साथ में श्री 1008 पार्श्वनाथ भगवान, श्री 1008 चन्द्रप्रभ भगवान एवं श्री 1008 आदिनाथ भगवान की खड़गासन गुलाबी एवं श्वेत पाषाण से निर्मित मनोहारी प्रतिमाओं को नवनिर्मित वेदी पर विराजमान किया गया।

इस अवसर पर ख्यातिप्राप्त डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनीवालों के प्रात: एवं रात्रि में समयसार पर प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, डॉ. सुदीपजी जैन दिल्ली, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित प्रकाशदादाजी ज्योतिर्विद मैनपुरी, पण्डित अरविन्दजी करहल आदि विद्वानों के प्रवचनों का लाभ भी मिला।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के निर्देशन में पण्डित ऋषभजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पण्डित मनीषजी शास्त्री पिड़ावा, पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़, ब्र. सुकुमालजी झांझरी उज्जैन आदि ने सम्पन्न कराये।

इस प्रतिष्ठा महोत्सव में नेमिकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती ज्ञानमाला-श्री धनदेवजी जैन शिकोहाबाद को तथा सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी बनने का सौभाग्य श्रीमती भारतीबेन-श्री विपिनभाई भायाणी, अमेरिका को मिला।

समारोह में फिरोजाबाद, आगरा, अलीगढ़, एत्मादपुर, एटा, मैनपुरी, लखनऊ, सिरसागंज, कुरावली, करहल, भिण्ड, मौ, ग्वालियर के अतिरिक्त राजस्थान एवं गुजरात के हजारों धर्मावलम्बियों ने उपस्थित होकर लाभ उठाया। सात दिन तक चलनेवाले इस महोत्सव से शिकोहाबाद में महती धर्म प्रभावना हुई।

- राकेश जैन

साधना चैनल पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचन प्रतिदिन प्रात: 6:45 बजे अवश्य सुनें।
साधना चैनल आपके यहाँ न आता हो तो श्री पंकज जैन (साधना चैनल) से 011-32106419 नम्बर पर सम्पर्क करें।

सम्पादकीय –

पञ्चास्तिकाय परिशीलन

21 ह्न रतनचन्द भारिल्ल

गाथा–३०

पाणेहिं चदुहिं जीवदि जीविस्सदि जो हु जीविदो पुव्वं।
सो जीवो पाणा पुण बलमिंदियमाउ उस्सासो ।।

(हरिगीत)

श्वास आयु इन्द्रिबलमय प्राण से जीवित रहे।
त्रय लोक में जो जीव वे ही जीव संसारी कहे।।

विगत २९वीं गाथा में कहा है कि ह्न केवली भगवान स्वयमेव सर्वज्ञत्वादि रूप से परिणमित होते हैं; उनके उस परिणमन में लेशमात्र भी इन्द्रियादि पर का अवलम्बन नहीं है।

अब इस ३०वीं गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव कहते हैं कि जो चार प्राणों से जीता है, जियेगा और पूर्वकाल में जीता था, वह जीव है। वे चार प्राण ह्न इन्द्रिय, बल, आयु और श्वासोच्छ्वास हैं।

आचार्य अमृतचन्द्र टीका में कहते हैं कि यह जीवत्व गुण की व्याख्या है। संसारी जीव के उपर्युक्त गाथा में निरूपित चार प्राण होते हैं। उन चारों प्राणों में चित्सामान्यरूप अन्वयवाले भावप्राण होते हैं तथा जिनमें पुद्गल सामान्यरूप अन्वय है, उसे द्रव्यप्राण कहते हैं।

उन दोनों प्राणों को त्रिकाल अटूट धारा रूप से धारण करता है, इसलिए संसारी जीव को जीवत्व है। सिद्ध जीव को तो केवल चेतनारूप भाव प्राणों का ही धारण होने से उनके जीवत्व है ह्न ऐसा समझना।

आचार्य जयसेन कहते हैं कि यद्यपि शुद्ध निश्चय से जीव शुद्ध चैतन्य आदि प्राणों से जीता है; तथापि अनुपचरित असद्भूत व्यवहार से द्रव्यरूप तथा अशुद्ध निश्चयनय से भावरूप चारों प्राणों द्वारा संसार अवस्था में वर्तमान काल में जीता है, भविष्य में जियेगा तथा भूतकाल में जीता था; वह चार प्राणों से सहित जीव है। वे द्रव्य–भावप्राण भी अभेद से बल, इन्द्रिय, आयु और उच्छ्वास लक्षणरूप हैं।

इस गाथा का तात्पर्य यह है कि मन, वचन, काय के निरोधपूर्वक पाँचों इन्द्रिय–विषयों से व्यावर्तन के बल द्वारा शुद्ध चैतन्यादि प्राण सहित जीवास्तिकाय ही उपादेय है, ध्यान का ध्येय है।

इसी बात को कविवर हीराचन्दजी पद्य में कहते हैं ह्न

(दोहा)

प्रान चारि तिहुँकालमैं जीवत सो पुन जीव।
बल–इंद्रिय–उस्सास फुनि आयु जु प्रान सदीव।।१७७।।

(सवैया)

बल–इंदिय–आयु–उछास नाम प्रान चारि,
भाव–दरव–भेदतैं दुविध बखान है।
चेतनारूप जो जो सो सो भाव प्रान लसैं,
पुद्गल पिंडरूपी दरव–परान है।।
तीन कालविषैं प्रान–संतति सुछंदरूप,
याहीतैं जगत माहिं जीव अभिधान है।
मुगतिमैं चेतनादि भावप्रान धारनतैं
सुद्ध जीव–भेद सोई अनुभौ प्रमान है।।१७८।।

(दोहा)

सुद्ध–प्रान सिवजीवकै, सदाकाल आदेय।
संसारी परजोगतैं, विकल बहिर्मुख हेय।।१७९।।

उपर्युक्त पद्यों में चारों द्रव्य एवं भाव प्राणों द्वारा जीव तथा अजीव की पहचान कराते हुए शुद्ध जीव का आश्रय लेने को कहा गया है।

इसी गाथा पर प्रवचन करते हुए गुरुदेवश्री कानजी स्वामी ने विशेष यह कहा है कि ह्न जो जीव अल्पज्ञ की क्षणिक–अपूर्ण पर्याय को सम्पूर्ण जीवद्रव्य मानता है, वह जीव पर्यायबुद्धिरूप अज्ञान के कारण संसार में परिभ्रमण करता है और जो त्रिकाली पूर्ण स्वभाव को मानकर स्व–सन्मुख होता है, वह अशरीरी सिद्ध पद प्राप्तकर अविनाशी सुख को प्राप्त करता है।

बल, इन्द्रिय, आयु और श्वासोच्छ्वास इन चार प्राणों का स्पष्टीकरण करते हुए गुरुदेव कहते हैं कि मन–वचन–काय ह्न ये तीनों तो जड़ हैं, इनके साथ जुड़ा बल शब्द जीव के वीर्य गुण का परिचायक है, वर्तमान में शक्ति का क्षयोपशम वीर्य गुण की योग्यता है। अशुद्ध निश्चयनय से जीव उस (बल) वीर्य प्राण से जीता है।

आयु एवं श्वासोच्छ्वास यद्यपि जड़ हैं; परन्तु जीव अपनी तत्समय की योग्यता और इन दोनों प्राणों के निमित्त से जीवित रहता है। द्रव्येन्द्रियाँ भी जड़ हैं तथा भावेन्द्रियाँ जीव की क्षयोपशमरूप योग्यता है।

उपर्युक्त चारों प्राणों में जो चैतन्यपरिणति है, वह भाव प्राण है और उनके साथ जो पुद्गल की उसरूप परिणति है, वह द्रव्य प्राण है।

वास्तव में तो स्वयं सुख, सत्ता, चैतन्य, बोध ह्न इन चार त्रिकाली प्राणों से जीता है और पर्याय में भावप्राण से व निमित्तरूप द्रव्यप्राण से जीता है ह्न इसप्रकार सबका ज्ञान कराना ही यथार्थ ज्ञान है।

प्रत्येक गाथा में तीन समय लागू पड़ते हैं ह्न १. शब्द समय, २. ज्ञान समय, और ३. पदार्थ समय। जिन शब्दों के निमित्त से आत्मज्ञान होता है, वे शब्द ही शब्द समय हैं। जो आत्मा का यथार्थ ज्ञान हुआ वह ज्ञान ही ज्ञान समय और जिस जीव को आत्मा का ज्ञान हुआ है, पदार्थ समय है।

उपर्युक्त जड़ द्रव्यप्राण, क्षयोपशमरूप भावप्राण और चैतन्य सत्तास्वरूप शुद्ध प्राणों से भरा–पूरा जीवद्रव्य पदार्थ समय है। इस जीवद्रव्य पदार्थ में द्रव्य–गुण–पर्याय तीनों आ गये। इन तीनों को यथार्थ जाननेवाला आत्मा ही वस्तुत: ज्ञानसमय है और इसे बतलानेवाला शब्दसमय है।

इसप्रकार इस गाथा में जड़प्राणों का निमित्तपना, पर्याय का खण्ड–खण्डपना और द्रव्य का अखण्डपना बतलाया है।

मोक्षदशा में जीव केवल शुद्ध चैतन्यादि प्राणों से जीता है, इसलिए सिद्ध जीव को शुद्ध जीव कहते हैं। संसारी जीव को अशुद्ध जीव कहते हैं; क्योंकि उसके साथ अभी क्षयोपशम भावप्राण और द्रव्यप्राणों का साथ है। जो जीव इसप्रकार वस्तुस्वरूप को समझकर शुद्धात्मा का आश्रय लेता है, उसका संसार अल्प रह जाता है। यही इस गाथा का मूल तात्पर्य है।

गाथा–३१–३२

अगुरुलहुगा अणंता तेहिं अणंतेहिं परिणदा सव्वे।
देसेहिं असंखादा सिय लोगं सव्वमावण्णा।।
केचित्तु अणावण्णा मिच्छादंसणकसायजोगजुदा।
विजुदा य तेहिं बहुगा सिद्धा संसारिणो जीवा।।

(हरिगीत)

अगुरुलघुक स्वभाव से जिय अनन्त गुणमय परिणमें।
जिय के प्रदेश असंख्य पर जिय लोकव्यापी एक है।।
बन्धादि विरहित सिद्ध आस्रव आदि युत संसारि सब।
संसारि भी होते कभी कुछ व्याप्त पूरे लोक में।।

इसके पूर्व गाथा ३० में कहा है कि शुद्ध जीव शुद्ध चेतनारूप भावप्राणों से तथा संसारी जीव अशुद्ध भावप्राण एवं द्रव्यप्राणों से त्रिकाल जीवित रहते हैं।

प्रस्तुत गाथाओं में आचार्य कुन्दकुन्द कहते हैं कि ह्न सर्व जीव अपने-अपने अनन्त अगुरुलघुत्व गुणांशों के रूप से परिणमित हैं। प्रत्येक जीव के वे अगुरुलघुक गुणांश असंख्यात प्रदेशवाले हैं। वे कथंचित् समस्त लोक में व्याप्त होते हैं और कथंचित् वे स्वदेह प्रमाण ही रहते हैं।

अनेक (अनन्त) जीव मिथ्यादर्शन कषाय योग सहित संसारी हैं और अनेक (अनन्त) जीव मिथ्यादर्शन कषाय योग रहित सिद्ध हैं।

टीका में आचार्य अमृतचन्द्र कहते हैं कि जो प्रत्येक जीव का स्वाभाविक प्रमाण अनंत है अर्थात् जीव को अगुरुलघुत्व स्वभाव के छोटे से छोटे अंश (अविभागी परिच्छेदों) के स्वभाव से देखें तो प्रत्येक जीव अनंत अंशवाले होते हैं, इसीलिए जीवों को अनंत प्रमाण कहा है। उन जीवों में कुछ केवली समुद्घात की अपेक्षा समस्त लोक में व्याप्त होते हैं और कुछ लोक में अव्याप्त होते हैं।

आचार्य जयसेन कहते हैं कि ह्न अगुरुलघुक गुणांश अनन्त हैं, उन अनन्तों द्वारा सभी परिणमित हैं; वे प्रदेशों की अपेक्षा असंख्यात हैं। उनमें से कुछ तो कथंचित् सम्पूर्ण लोक को प्राप्त हैं और कुछ अप्राप्त हैं। अनेक जीव मिथ्यादर्शन, कषाय से सहित संसारी हैं तथा अनेक उनसे रहित सिद्ध हैं।

यहाँ इसी बात को संक्षेप में पद्य में कवि हीरानन्द कहते हैं कि ह्न

(सवैया)

अविभागी एक जीव ताकै परदेसपुंज,
सूखिम है अनूमान तेई अंत लसै है।
अगुरु-लघु-सरूप-साधक सुभाव तामैं,
लागै बिना भेद ताकै हानिवृद्धि रसै हैं।।
लोक पूरनैकी समैं लोकव्यापी जीव कह्या,
और समै देहमान जीवदेस कसै हैं।
मिथ्या औ कषाय-योग-संपत्ति अनादि जोगी,
संसारी विजोगी सिद्ध मोख माहिं बसै हैं।।१८२।।

उक्त दोनों छन्दों में यह स्पष्ट कहा है कि ह्न एक जीव द्रव्य यद्यपि अविभागी है, तथापि उसके असंख्यात प्रदेश पुंज हैं। वे सभी सूक्ष्म हैं। उसमें अगुरुलघु नामक गुण या शक्ति है, जिससे अभेद रहते हुए भी षट्गुणहानि-वृद्धिरूप परिणमन होता है। यह जीव लोकपूरण समुद्घात के समय लोकव्यापी होता है, शेष समय में अपने-अपने देह प्रमाण रहता है। मिथ्यात्व, कषाय, योग के कारण जीव अनादि से संसारी है और इनसे रहित जीव मोक्षपद प्राप्त करते हैं।

इन्हीं दोनों गाथाओं पर प्रवचन करते हुए गुरुदेवश्री कानजी स्वामी कहते हैं कि ह्न इस गाथा में जीवों के स्वाभाविक प्रदेशों की अपेक्षा संख्या का प्रमाण तथा उनके मुक्त और संसारी भेद बतलाये हैं।

प्रत्येक जीव अपने अगुरुलघु गुण में षट्गुणहानिवृद्धिरूप परिणमित हो रहा है। अपनी मर्यादा से बाहर नहीं जाता। आत्मा असंख्यात प्रदेशी है। वे असंख्यात प्रदेश कभी कम-ज्यादा नहीं होते। आत्मा में अनन्तगुण हैं, वे भी कभी कम-ज्यादा नहीं होते।

अगुरुलघुगुण आत्मा की मर्यादा की सुरक्षा करता है। उसका अविभागी अंश अतिसूक्ष्म है। प्रत्येक द्रव्य के द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की मर्यादा बंधी है।

● सिद्ध के जितने गुण हैं उतने ही प्रत्येक जीव के गुण हैं। उनमें से एक भी गुण घटता-बढ़ता नहीं है। यह त्रिकाली गुण की मर्यादा की बात हुई। सिद्ध होने से गुण बढ़ते नहीं और निगोद होने से घटते नहीं।

● आत्मा के असंख्य प्रदेश हैं, उनमें से एक प्रदेश भी घटता-बढ़ता नहीं है। जीव निगोद में जाए, चींटी हो अथवा हाथी हो या केवली समुद्घात करे; तथापि क्षेत्र में एक प्रदेश भी कम या ज्यादा नहीं होता। यह क्षेत्र की मर्यादा की बात हुई।

● जीव की पर्याय साधकदशा रूप हो या बाधकदशारूप पर्याय हो; निगोद की हो या सिद्ध की हो; तीव्र अज्ञानतारूपपर्याय हो या ज्ञानदशारूप पर्याय हो; परन्तु वह पर्याय अपनी मर्यादा में रहती है, वह अन्य की पर्याय में नहीं जाती है।

इसप्रकार द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा बँधी है। अथवा प्रत्येक जीव अपने द्रव्य-गुण-पर्याय की मर्यादा में रहता है। अवस्था की मर्यादा एकसमय की और द्रव्य-गुण की मर्यादा त्रिकाल है। इसप्रकार दोनों की मर्यादा जानकर पूरा प्रमाणज्ञान होता है। अपने ज्ञान में पूरा आत्मद्रव्य ज्ञेयरूप से ख्याल में आ जाता है। इस१कार प्रत्येक आत्मा, अभव्य भी, अपनी मर्यादा में रहता है। ज्ञान, दर्शन, चारित्रादि अनंत गुण और उनकी प्रतिसमय की पर्याय ह्न इसप्रकार गुण-पर्याय का बना द्रव्य अपनी मर्यादा में रम रहा है। ●

जैनदर्शन की सबसे पड़ी विशेषता यह है कि वह कहता है कि सभी आत्मा स्वयं भगवान हैं। स्वभाव से तो सभी भगवान हैं ही, यदि सम्यक् पुरुषार्थ करें अर्थात् अपने को जानें, पहिचानें और अपने में ही जम जावें, रम जावें तो प्रकटरूप से पर्याय में भी भगवान बन सकते हैं।

रविवारीय गोष्ठियों का आयोजन

जयपुर : यहाँ श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय द्वारा आयोजित रविवारीय गोष्ठियों की शृंखला में दिनांक 28 नवम्बर, 2004 को **पं. टोडरमलजी और उनका मोक्षमार्गप्रकाशक** विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया; सभा की अध्यक्षता प्रतिष्ठाचार्य पण्डित विमलकुमारजी जैन जयपुर ने की। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में शास्त्री वर्ग से प्रशांत उखलकर व रोहन रोटे तथा उपाध्याय वर्ग से तपिश जैन को पुरस्कृत किया गया। सभा का संचालन जितेन्द्र जैन खड़ैरी ने तथा संयोजन अमित जैन लुकवासा ने किया।

इसी शृंखला में दिनांक 5 दिसम्बर, 2004 को **मिथ्यात्व दु:ख का एक मात्र कारण** विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया। अध्यक्षता डॉ. दीपकजी जैन, जयपुर ने की। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में कु.अनुप्रेक्षा जैन मुम्बई एवं शीतल आलमान हेरले को चुना गया। सभा का संचालन सचिन्द्र जैन गढाकोटा ने किया। **ह्न विक्रान्त पाटनी**

एक्यूप्रेशर चिकित्सा शिविर सम्पन्न

जयपुर (राज.) : श्री टोडरमल स्मारक भवन स्थित श्री रविन्द्र पाटनी फै. चै. ट्रस्ट में कार्यरत चिकित्सक डॉ. पीयूष त्रिवेदी द्वारा दिनांक 1 दिसम्बर से 7 दिसम्बर, 2004 तक श्री धन्वन्तरी औषधालय में सप्त दिवसीय एक्यूप्रेशर चिकित्सा शिविर का नि:शुल्क आयोजन किया गया; जिसमें कुल 850 रोगियों ने लाभ लिया। ज्ञातव्य है कि डॉ. पीयूष त्रिवेदीजी प्रतिदिन सायं 3 से 6 बजे तक श्री टोडरमल स्मारक भवन में अपनी सेवायें दे रहे हैं।

रत्नत्रय मण्डल विधान सानंद सम्पन्न

अजमेर (राज.) : यहाँ श्री वीतराग-विज्ञान स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में श्री सीमंधर जिनालय प्रांगण में अष्टान्हिका पर्व के अवसर पर दिनांक 19 नवम्बर से 26 नवम्बर, 2004 तक रत्नत्रय मण्डल विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर प्रतिदिन प्रात: एवं रात्रि में पण्डित देवेन्द्रकुमारजी जैन, बिजौलिया के प्रवचनसार एवं समयसार पर मार्मिक प्रवचन हुये।

अभिषेक एवं पूजन विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित अभिनयजी शास्त्री जबलपुर द्वारा कराये गये। सहयोगी श्री श्रेणिक-मेघा लुहाड़िया एवं श्री पूनमचन्दजी लुहाड़िया थे। **– विजयकुमार पाण्ड्या**

विभिन्न अवसरों पर प्राप्त दानराशियाँ

1. स्व. श्रीमती मनोरमादेवी पाटनी धर्मपत्नी श्री बी.एल. पाटनी, जयपुर की द्वितीय पुण्यतिथि दिनांक 31 दिसम्बर, 2004 पर जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान को 251/- रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

2. सूरत निवासी श्री सुनीलकुमार एवं पीयुषकुमार जैन जयपुरवालों द्वारा दीपावली के अवसर पर विशेष सहायता के रूप में कुल 1000/- रुपये जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान को प्रदान किये गये; एतदर्थ धन्यवाद ! **ह्न प्रबन्ध सम्पादक**

पुरस्कार वितरण एवं गोष्ठी सम्पन्न

उदयपुर (राज.) : यहाँ मुखर्जी चौक स्थित चन्द्रप्रभ दिगम्बर जिन चैत्यालय मुमुक्षु मण्डल में दिनांक 5 दिसम्बर को वीतराग-विज्ञान रविवारीय जैन पाठशाला के तत्त्वावधान में जीवदया हेतु पुरस्कार वितरण किया गया। यह पुरस्कार मुमुक्षु मण्डल के 3 से 18 वर्ष तक आयु के बच्चों को दीपावली के अवसर पर पटाखे नहीं फोड़ने हेतु प्रदान किये गये, इसमें 22बच्चों ने पटाखे नहीं फोड़कर अहिंसक दीपावली मनाने की प्रतिज्ञा ली।

कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री सुजानमलजी गदिया ने की, मुख्यअतिथि जिलाध्यक्ष श्री ताराचन्द जैन एवं विशिष्ट अतिथि श्रीमती किरण जैन थी।

इस अवसर पर आयोजित विचार गोष्ठी में पार्षद श्रीमती मनोरमा गुप्ता, श्री कन्हैयालाल दलावत, श्री भंवरलाल गंगावत, श्री राजेन्द्र भोरावत आदि ने अपने विचार व्यक्त किये। बच्चों को पुरस्कार वितरण नेमिचंद भोरावत चैरिटेबल ट्रस्ट की ओर से किया गया। कार्यक्रम का संयोजन एवं संचालन श्री जिनेन्द्रकुमारजी शास्त्री थे। **– सुरेश भोरावत**

परीक्षा बोर्ड के फार्म शीघ्र भेजें

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड, ए-4, बापूनगर, जयपुर की शीतकालीन परीक्षायें दिनांक 28, 29 एवं 30 जनवरी, 2005 को होने जा रही है। जिन परीक्षा केन्द्रों ने अभीतक भी छात्र प्रवेश फार्म भरकर नहीं भेजे हैं, वे तत्काल भेज देवें। डाक की गडबडी से जिन केन्द्रों को फार्म अप्राप्त हैं, वे सादे कागज पर छात्रों के नामों की सूची 30 दिसम्बर के पूर्व अवश्य भेज देवें। इसके बाद प्राप्त होनेवाले फार्मों पर विचार नहीं किया जायेगा। **– प्रबन्धक, परीक्षा बोर्ड**

सबकुछ दुख दूर करने के लिये

● हम देखते हैं कि हमारा चलना-फिरना, उठना-बैठना, सोना, खाना-पीना, निबटना आदि सभी दु:ख दूर करने और सुखी होने के लिये ही होते हैं। गहराई से विचार करें तो हमारी छोटी से छोटी क्रिया भी इसी प्रयोजन की सिद्धि के लिये ही होती है। जब हम एक आसन से बैठे-बैठे थक जाते हैं तो चुपचाप आसन बदल लेते हैं और हमारा ध्यान इस क्रिया की ओर जाता ही नहीं है। हम यह समझते ही नहीं है कि अभी हमने दुख दूर करने के लिये कोई प्रयत्न किया है; पर हमारा यह छोटा-सा प्रयत्न भी दुख दूर करने के लिये ही होता है।

● समस्त सांसारिक दुखों को दूर करने के इलाज का नाम ही जैनधर्म है, मोक्षमार्ग है तथा वीतरागी परमात्मा और उनके मार्गानुसार चलनेवाले संत ज्ञानीजन ही सच्चे डॉक्टर हैं।

– आत्मा ही है शरण, पृष्ठ-35

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड

श्री टोडरमल स्मारक भवन

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राजस्थान)

शीतकालीन परीक्षा कार्यक्रम सत्र-2004-05

दिन व दिनांक	नाम ग्रन्थ
शुक्रवार 28 जनवरी 2005	1. बालबोध पाठमाला भाग-1 (बा.प्रथम खण्ड) मौखिक 2. जैन बालपोथी भाग-1 (मौखिक) 3. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग1(प्रवेशिका प्रथम खण्ड) 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-1 5. छहढाला (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) पूर्वार्द्ध 7. मोक्षमार्गप्रकाशक (पूर्वार्द्ध) 8. जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (बरैयाजी) 9. विशारद प्रथम खण्ड (प्रथम वर्ष)
शनिवार 29 जनवरी 2005	1. बालबोध पाठमाला भाग-2 (बा.द्वितीय खण्ड) मौखिक 2. जैन बालपोथी भाग-2 (मौखिक) 3. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग2(प्रवेशिका द्वितीय खण्ड) 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग 2 5. द्रव्यसंग्रह (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) उत्तरार्द्ध 7. लघु जैनसिद्धान्त प्रवेशिका (सोनगढ़) 8. मोक्षमार्गप्रकाशक (उत्तरार्द्ध) 9. विशारद प्रथम खण्ड (द्वितीय वर्ष) 10. विशारद द्वितीय खण्ड (प्रथम वर्ष)
रविवार 30 जनवरी 2005	1. बालबोध पाठमाला भाग 3 (बा.तृतीय खण्ड) मौखिक 2.वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग 3 (प्रवेशिका तृतीय खण्ड) 3. रत्नकरण्डश्रावकाचार (पूर्ण) 4. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय (पूर्ण) 5. विशारद द्वितीय खण्ड (द्वितीय वर्ष)

नोट -

(1) सुविधानुसार परीक्षा का समय सुबह 9 बजे से शाम 5 बजे तक के बीच में कभी भी सैट किया जा सकता है।

(2) जहाँ एक से अधिक केन्द्र हों, वे आपस में मिलकर समय निश्चित करें।

(3) यदि किन्हीं विषयों के छात्र आपस में टकराते हों तो परीक्षा सुविधानुसार दिन में दो बार ली जा सकती है।

(4) बालबोध पाठमाला भाग 1, 2, 3 और जैन बालपोथी भाग 1 व 2 की परीक्षायें मौखिक में लेवें।
शेष सभी विषयों की परीक्षायें लिखित में लेवें।

नये वर्ष का स्वागत

-विराग शास्त्री, जबलपुर

नूतन - प्रतिभा ओ प्रतिभा ! जल्दी से तैयार हो जाओ, मैं दस मिनिट में ड्रेस बदलकर आती हूँ।

प्रतिभा - क्यों कहीं चलना है क्या ? और इतनी रात को ! पता है 9 बज रहे हैं !

नूतन - अरे यार ! तू भी गजब करती है, आज तो 31 दिसम्बर है, रात 12 बजे के बाद नया वर्ष प्रारंभ हो रहा है न ! इसके लिये स्वाति ने अपने घर में पार्टी रखी है, वहीं चलना है और पार्टी का मजा तो रात में ही आता है। चलो, जल्दी करो, अपनी सारी सहेलियाँ पहुँच गई होगी।

प्रतिभा - पर मैं नहीं जाऊँगी।

नूतन - पर क्यों ? तुझे पता है वहाँ कितना मजा आयेगा ?

प्रतिभा- मुझे पता है वहाँ क्या होगा ? डाँस, मौज-मस्ती, हंसी-मजाक और खाने-पीने के सिवा क्या होगा ?

नूतन - अरे यार ! ये ही लाइफ है और ये तो नये वर्ष का सेलिब्रेशन है।

प्रतिभा - मुझे समझ में नहीं आता किस बात का सेलिब्रेशन है। क्या अंतर है 31 दिसम्बर और 1 जनवरी में ? क्या कुछ उपलब्धि हुई है ? क्या हमारे जीवन में कुछ नवीनता आई है ? क्या हमारे परिणामों में विशुद्धता बढ़ी है या कषाय कम हुई है जो हम नये साल का स्वागत करें। सब कुछ वैसा ही है।

नूतन - तुमसे तो बात करना ही बेकार है ? हमेशा उपदेश ही देती हो।

प्रतिभा - बात उपदेश की नहीं है नूतन ! जरा विचार तो करो, ये तो ईसाइयों का नया वर्ष है। हमारा नया वर्ष तो वीर निर्वाण दिवस अर्थात दीपावली से ही प्रारंभ हो गया। सच्चा नया वर्ष तो तभी मनाया गया था।

नूतन - बात तो तुम सच कह रही हो ।

प्रतिभा - वास्तव में जिस दिन हमें आत्मानुभव हो जाये, वही दिन हमारा नया वर्ष है। हमारा परिग्रह कम हो, हम अपना आचरण शुद्ध करें, जीवन में कोई नई धार्मिक शुरुवात करें।

नूतन - अच्छा, तू ही बता कैसे मनाया जाय नया वर्ष ?

प्रतिभा - कई तरीके हो सकते हैं नया वर्ष मनाने के। तुम अपने जीवन में आज से ही दैनिक स्वाध्याय का नियम ले सकती हो, रात्रि भोजन एवं जमीकन्द सेवन जैसी खोटी बातों का त्याग कर सकती हो। इससे तुम अनंत पाप से तो बचोगी ही, जीवन भी शुद्ध सात्विक हो जायेगा। इसलिये मैं तो कहती हूँ कि इन सब बुराईयों को 31 दिसम्बर के साथ विदाई दे दो और नये वर्ष का स्वागत अपने जीवन की शुद्धता से करो।

नूतन - वाह प्रतिभा ! मैं आज से ही आजीवन रात्रि भोजन त्याग का नियम लेती हूँ। यथासंभव स्वाध्याय भी किया करूँगी।

प्रतिभा - ये हुई न कोई बात। **हैप्पी न्यू ईयर !**

प्रवचनसार का सार

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

'मैंने मोह की सेना को जीतने के लिए कमर कसी है।' ह्न ऐसा कहकर अमृतचन्द्राचार्य यह नहीं बताना चाहते हैं कि मैं कुछ करने जा रहा हूँ और न ही वे अपनी महिमा बता रहे हैं। इस भाषा के माध्यम से वे यह कहना चाहते हैं कि 'यदि तुम्हें आत्मा का कल्याण करना है तो मोह की सेना को जीतने के लिए कमर कस लो।'

जब कोई किसी सज्जन के पास यह पूछने जाता है कि 'भाई साहब! ऐसी-ऐसी परिस्थिति है, ऐसी परिस्थिति में मुझे क्या करना चाहिए ? आप मुझे सलाह दो।'

तब वह सज्जन ऐसा ही कहता है कि 'भाईसाहब! मैं आपकी बात तो क्या बताऊँ। लेकिन यदि मैं ऐसी परिस्थिति मैं फंसा होता तो मैं ऐसा करता और ऐसा नहीं करता। मैं तो ऐसी जगह एक सैकेण्ड भी खड़ा नहीं रह सकता, मैं तो उस आदमी के पास जाता ही नहीं, मैं तो उसकी शक्ल ही नहीं देखता। अब आपको जो जँचे सो करो। आप मेरी सलाह पूछते हैं तो उसके हिसाब से तो आपको इस बात में उलझना ही नहीं चाहिए। आपको इस बारे में सोचना ही बन्द कर देना चाहिए।'

इसीप्रकार आचार्यदेव कह रहे हैं कि मैंने तो मोह की सेना को जीतने के लिए कमर कसी है। तात्पर्य यह है कि आपको भी यही करना चाहिए।

कपड़े बेचनेवाले दुकानदार भी इसी प्रवृत्ति के होते हैं। हमें धोती का जोड़ा लेना है; अत: हम उससे पूछते हैं कि मैं आपसे पूछता हूँ कि मुझे इसमें से कौन-सी धोती लेनी चाहिए।

इस पर दुकानदार कहता है कि 'भाई साहब ! मैंने तो यह पहन रखी है, मुझे तो यही धोती-जोड़ा अच्छा लगता है।

इसप्रकार आचार्यदेव ने '**बद्धा कक्षेयम्**' कहकर इसी भाषा का प्रयोग किया है। आचार्य कहते हैं कि भाई, क्रियाकाण्ड में, देह की क्रिया में ही मत उलझे रहो। शुभभाव हो रहे हैं सो ठीक हैं। भूमिका के अनुसार वे होना ही चाहिए। तुम शुभभाव करके बड़ी गलती कर रहे हो ह्न ऐसा हम नहीं कह रहे हैं; परन्तु शुभभाव में सन्तुष्ट होना, इसी में धर्म मानना बड़ी गलती है।

इस पर यदि कोई कहे कि यदि आप ऐसा कहते हैं तो मैं पूजा करना छोड़ दूँगा तो हम कहते हैं कि छोड़ देना, उससे कोई आसमान टूटकर गिरनेवाला नहीं है ह्न ऐसी धमकी क्यों देते हो ? हम तो आपसे ऐसा नहीं कह रहे हैं कि आप पूजा करना छोड़ दो। भाई ! मैं तो उसे धर्म मानना छोड़ दो ह्न ऐसा कह रहा हूँ।

यहाँ पूजा छोड़ने की बात नहीं है; क्योंकि जिस भूमिका में जैसा होता है; उस भूमिका में वैसा ही होगा। इसीप्रकार हम दान देने का निषेध नहीं करते हैं। हम तो दान देने के बाद जो 'मैं चौड़ा और बाजार संकड़ा' ऐसी प्रवृत्ति होती है, उसका निषेध कर रहे हैं।

अब आचार्य यहाँ मोह की सेना को जीतने के लिए क्या उपाय करना चाहिए ह्न इस सन्दर्भ में विचार करते हैं। यहाँ ८० वीं गाथा की भूमिका के अन्तर्गत मोहरूपी सेना को जीतने के उपाय का प्रकरण चल रहा है।

यहाँ आचार्य उस भूमिका की चर्चा कर रहे हैं, जिस भूमिका में चाहे मुनि हो, चाहे गृहस्थ हो; परन्तु उसे आत्मा का अनुभव नहीं है। आचार्य कह रहे हैं कि भूमिका के योग्य तुम्हारी सम्पूर्ण धार्मिक क्रियाएँ अच्छी हों; भाव भी भूमिकानुसार शुभ हो; पर उनसे कुछ भी सिद्ध होनेवाला नहीं है। तुमने बहुत उत्कृष्ट काम कर लिया है ह्न इस धोखे में मत रहना।

यहाँ कोई क्रिया छोड़ने का प्रकरण नहीं है, यहाँ तो मोह की सेना को जीतने का उपाय बता रहे हैं।

जो जाणदि अरहंतं, दव्वत्तगुणत्तपज्जयेत्तेहिं।
सो जाणदि अप्पाणं, मोहो खलु जादि तस्स लयं।।८०।।

(हरिगीत)

द्रव्य-गुण-पर्याय से जो जानते अरहंत को।
वे जानते निज आतमा दृगमोह उनका नाश हो।।८०।।

जो अरहंत को द्रव्यपने, गुणपने और पर्यायपने जानता है; वह अपने आत्मा को जानता है और उसका मोह अवश्य क्षय को प्राप्त होता है।

अरहंत इस पद में देव-शास्त्र-गुरु तीनों समाहित होते हैं। अरहंत देव, उनकी दिव्यध्वनि शास्त्र और उसके प्रतिपादक भावलिंगी सन्त गुरु हैं। जिसे आत्मा का अनुभव नहीं है, उसे एकदम अंतर से आत्मा का अनुभव नहीं हो जायेगा। उसे अरहंत के द्रव्य-गुण-पर्याय का निर्णय करना होगा; वह निर्णय देशनालब्धि अथवा जिनवाणी के आधार से ही होगा। यह निर्णय दिव्यध्वनि से होगा अथवा गणधरों के द्वारा गूँथी हुई द्वादंशाग वाणी से होगा। इसप्रकार अरहंत इस पद में देव-शास्त्र-गुरु तीनों समाहित होते हैं। वास्तव में तो अरहंत भगवान ही परमगुरु हैं। शेष तो परम्परागुरु हैं।

जबतक आत्मा का अनुभव नहीं हुआ है, तबतक शुभभाव ही है। इसलिए आचार्य ने इस गाथा को शुभपरिणामाधिकार में समाहित किया है।

यहाँ आचार्यदेव ने अरहंत को 'द्रव्य-गुण-पर्याय से जानने' की बात की है; जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। यदि आचार्य यह विशेषण नहीं लगाते तो हम अरहंत को ३४ अतिशय और ८ प्रातिहार्यों से ही देखते।

इसप्रकार इसी में अटक जाते। इसप्रकार जीव भ्रमित न हो; इसलिए ही आचार्यदेव ने यहाँ द्रव्य-गुण-पर्याय से जानने की बात कही है।

द्रव्य-गुण-पर्याय से जाने अर्थात् अरहंत को वस्तुस्वरूप से जाने। अरहंत तो अवस्था का नाम है; फिर आचार्यदेव ने यहाँ 'द्रव्य-गुण-पर्याय से जानो' यह बात क्यों कही ?

आचार्यदेव चाहते हैं कि हम अरहंत पर्याय में विद्यमान सर्वज्ञता को जाने, वीतरागता को जाने; क्योंकि हमारा स्वभाव भी सर्वज्ञत्वशक्ति सम्पन्न हैं। ये मतिज्ञान हमारा स्वभाव नहीं है। हमारा पर्यायस्वभाव भी सर्वज्ञ जैसा ही है।

आचार्य यहाँ यह लिखते हैं कि जो अरहंत को द्रव्य-गुण-पर्याय से जानेगा; वह अपने आत्मा को द्रव्य-गुण-पर्याय से जानेगा।

आचार्य यहाँ यह कह रहे हैं कि अरहंत भगवान के द्रव्य-गुण-पर्याय को जानो अर्थात् उनके द्रव्य को पहिचानो; उनमें जो अनंत गुण हैं, उन्हें जानो और उनकी पर्यायों को भी जानों। जो आत्मा अरहंत को द्रव्य-गुण-पर्याय से जानता है, वही आत्मा अपने आत्मा को द्रव्य-गुण-पर्याय से जानता है और उसका ही मोह नाश को प्राप्त होता है।

इस विधि को अमृतचन्द्राचार्य ने टीका की इन दो पंक्तियों में और गंभीरता प्रदान की है ह्न 'जो वास्तव में अरहंत को द्रव्यरूप से, गुणरूप से और पर्यायरूप से जानता है, वह वास्तव में अपने आत्मा को जानता है; क्योंकि **दोनों में निश्चय से अंतर नहीं है।**'

इन पंक्तियों पर मुमुक्षुओं में बहुत चर्चा चलती है।

अरहंत को द्रव्य-गुण-पर्याय से जानने में दो दृष्टियाँ मुख्य हैं। प्रथम यदि हम पर्याय का विचार करें तो अरहंत पर्याय में सर्वज्ञता व वीतरागता मुख्य हैं। उनकी इस अवस्था को गहराई से जाने बिना सम्यग्दर्शन नहीं हो सकता। जब हम सर्वज्ञ व वीतरागी पर्याय को जानेंगे, तब हम यह जानेंगे कि सर्वज्ञता आत्मा के ज्ञानगुण की पर्याय है और वीतरागता चारित्रगुण की पर्याय है। इसप्रकार हमने गुण को जाना। फिर यह गुण आत्मा के हैं। इसप्रकार हमने द्रव्य को जाना।

आचार्य कहते हैं कि अरहंत की पर्याय में जैसी सर्वज्ञता व वीतरागता प्रगट हुई है; वैसा ही हमारा स्वभाव है। इसप्रकार आत्मा के सर्वज्ञस्वभाव व वीतरागस्वभाव को जानने के लिए अरहंत का सर्वज्ञस्वभाव व वीतराग-स्वभाव जानना जरूरी है।

यहाँ कोई पूछता है कि क्या मेरे आत्मा में से भी सर्वज्ञता व वीतरागता की पर्याय प्रगट होगी ? तब आचार्य कहते हैं कि भगवान ने उसके प्रगट होने की गारंटी दी है। लेकिन उसके प्रगट होने की एक व्यवस्थित विधि है; उस विधि से ही तेरा लक्ष्य सम्पन्न होगा। वह स्वभाव में है, इसलिए प्रगट होगी। वह विधि आत्मा के आश्रय की है; उसके आश्रय से ही तुझे सर्वज्ञता व वीतरागता मिलेगी।

जब इस जीव को यह निर्णय हो जाता है कि मैं वर्तमान में भी वीतराग व सर्वज्ञस्वभावी हूँ; तब वर्तमान की पर्याय में जो राग व अज्ञान है; उसकी उपेक्षा करके वीतरागस्वभावी व सर्वज्ञस्वभावी अपने आत्मा में अपनापन हो जाता है।

इसप्रकार आचार्य ने वीतराग व सर्वज्ञ स्वभाव प्रगट होने का उपाय बताया अर्थात् उपर्युक्त विधि बताई।

दूसरा बिन्दु यह है कि अरहंत और अपने आत्मा की समानता को जानो। द्रव्य और गुणों से तो यह आत्मा अरहंत के समान है ही; पर्याय में भी समानता है; क्योंकि कालान्तर में हमें भी तो ऐसी ही पर्याय प्रगट होगी।

आगे टीका में अमृतचन्द्राचार्य ने द्रव्य, गुण, पर्याय को परिभाषित किया है कि अन्वय द्रव्य है, अन्वय के विशेषण गुण हैं और अन्वय के व्यतिरेक (भेद) पर्यायें हैं।

इस कठिन विषय को भावार्थ में और अधिक सरलभाषा में स्पष्ट किया है ह्न ''इसप्रकार अपना आत्मा भी द्रव्य-गुण-पर्यायरूप से मन के द्वारा ज्ञान में आता है। इसप्रकार त्रैकालिक निज आत्मा को मन के द्वारा ज्ञान में लेकर ह्न जैसे मोतियों को और सफेदी को हार में ही अन्तर्गत करके मात्र हार ही जाना जाता है; उसीप्रकार आत्मपर्यायों को और चैतन्यगुण को आत्मा में ही अन्तर्गर्भित करके केवल आत्मा को जानने पर परिणामी-परिणाम-परिणति के भेद का विकल्प नष्ट होता जाता है; इसलिए जीव निष्क्रिय चिन्मात्र भाव को प्राप्त होता है और उससे दर्शनमोह निरास्रव होता हुआ नष्ट हो जाता है। यदि ऐसा है तो मैंने मोह की सेना पर विजय प्राप्त करने का उपाय प्राप्त कर लिया है ह्न ऐसा कहा है।''

आचार्य यहाँ कह रहे हैं कि मोती और डोरा मत देखो, हार को देखो; तभी वास्तविक आनंद आएगा। सभी यही कहते हैं कि मैंने नौलखा हार पहना है, ऐसा कोई नहीं कहता कि मैंने मोती पहने हैं।

डोरा व मोती निकाल दो और मात्र हार रखो ह्न ऐसी भाषा का प्रयोग नहीं है। डोरा व मोती इसके विकल्प में नहीं हैं, ज्ञान में नहीं हैं; ज्ञान में मात्र हार है। बस बात इतनी ही है।

जिसप्रकार डोरा व मोती निकाल दो और मात्र हार रखो ह्न ऐसी भाषा का प्रयोग कभी नहीं होता; उसीप्रकार गुण निकालो, पर्याय निकालो और मात्र द्रव्य को रखो ह्न ऐसी दृष्टि द्रव्यदृष्टि नहीं है।

यहाँ, आचार्यदेव ने परिणाम, परिणामी और परिणति की चर्चा की है। इसमें कहा है कि परिणाम के भेद का विकल्प नष्ट होता जाता है अर्थात् भेद का विकल्प नष्ट होता है, भेद नहीं।

प्रत्येक आत्मा में अनंत गुण हैं और प्रतिसमय एक गुण की एक पर्याय होती है ह्न हममें और अरहंत भगवान में पर्याय संबंधी यह समानता है।

जैसे ह्न चाहे चपरासी हो, चाहे जिलाधिकारी हो ह्न दोनों ही सरकारी नौकर हैं; जो उनमें भेद है, उसे मुख्य नहीं करना है।

ऐसे ही अरहंत और हमारा आत्मा परिणमनशील है; इसप्रकार दोनों में परिणमनशीलता समान है ह्न इसप्रकार दोनों की पर्याय में समानता है। पर्याय का जो भेद है; वह व्यक्तिगत स्तर पर है; उसे यहाँ नहीं देखना है।

हम जैनी और तुम जैनी ह्न इसप्रकार दोनों की एक ही जाति है। प्रवचन सुनने के लिए जो श्रोता आए हैं; उनमें कोई चपरासी भी हो सकता है और मन्त्री भी हो सकता है; पर जैन तो दोनों ही हैं। दोनों को यदि प्रवचन सुनना हो तो सबके साथ नीचे ही बैठना होगा।

एक बार आदर्शनगर में एक निवृत्त (रिटायर्ड) कलेक्टर साहब मेरा प्रवचन सुनने आए थे। वे प्रवचन के मध्य में बहस करने लग गए तो मैंने उन्हें रोक दिया। तो उन्होंने कहा 'जानते हो ह्न मैं कौन हूँ ? आखिर आप मुझे समझते क्या हैं ?' मैंने कहा 'आप एक श्रोता हो। मैं तो बस यही जानता हूँ।' उन्होंने झट से कहा कि 'मैं कलेक्टर हूँ।' मैंने कहा 'आप कलेक्टर होंगे; लेकिन इस समय मेरे लिए तो आप श्रोता ही हैं।'

इन्दिरा गांधी प्रधानमंत्री थीं; लेकिन वे भी अपने पति फिरोज गांधी के लिए तो पत्नी ही थीं। किसी का पति प्रधानमंत्री हो; लेकिन उसकी पत्नी के लिए तो वह पति ही है।

जब इसप्रकार परिणाम, परिणामी व परिणति के भेद का विकल्प नष्ट हो जाता है; तब यह जीव निष्क्रिय चिन्मात्र भाव को प्राप्त होता जाता है। उससे इसका दर्शनमोह निराश्रय होता हुआ नष्ट होता जाता है।

इसके पश्चात् आचार्य कहते हैं कि यदि ऐसा है तो मैंने मोह की सेना पर विजय प्राप्त करने का उपाय प्राप्त कर लिया है।

अरहंत भगवान को द्रव्य-गुण-पर्याय से जानो तो अपने आत्मा का जानना होगा और स्वयमेव ही मोह का नाश होगा। ●

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा संचालित –

39वाँ शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर, कोल्हापुर (महा.) में

प्रतिवर्ष ग्रीष्मावकाश में सम्पन्न होनेवाले शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों की शृंखला में 39 वाँ शिविर रविवार, दिनांक 8 मई, 2005 से बुधवार, दिनांक 25 मई, 2005 तक कोल्हापुर (महा.) में सर्वोदय स्वाध्याय समिति, कोल्हापुर द्वारा आयोजित होने जा रहा है।

इस शिविर में देश-विदेश में ख्यातिप्राप्त आध्यात्मिक प्रवक्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल तथा पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, ब्र.यशपालजी जैन, ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील आदि अनेक विद्वान उपस्थित रहेंगे। इनके अतिरिक्त डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी आदि अनेक विद्वानों से संपर्क किया जा रहा है।

नोट – हिन्दी भाषी प्रान्तों से पहुँचनेवाले मुमुक्षुओं के लिये भोजन आदि की समुचित व्यवस्था अलग रहेगी।

ध्रुवधाम का शिलान्यास सम्पन्न

बांसवाड़ा (राज.) : यहाँ श्री ज्ञायक चेरीटेबल ट्रस्ट (रजि.) द्वारा संस्थापित रत्नत्रय तीर्थ '**ध्रुवधाम**' का भव्य शिलान्यास समारोह दिनांक 7 एवं 8 दिसम्बर, 2004 को सानन्द सम्पन्न हुआ।

शिलान्यास महोत्सव में सम्पूर्ण विधि-विधान सम्बन्धी सम्पूर्ण कार्य ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के निर्देशन में पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर, पण्डित राकेशजी शास्त्री, पण्डित संदीपजी शास्त्री, पण्डित सुबोधजी शास्त्री, पण्डित वीरेन्द्रजी शास्त्री एवं पण्डित सुनीलजी 'धवल'के सहयोग से सम्पन्न हुये।

इस अवसर पर पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, ब्र.यशपालजी जैन, पण्डित देवेन्द्रकुमारजी बिजौलिया, पण्डित कमलचन्दजी पिड़ावा, डॉ. मानमलजी आदि अनेक विद्वान उपस्थित थे।

महोत्सव में श्री पंच बालयति दिग. जिनमंदिर, आ.कुन्दकुन्द स्वाध्याय भवन, आ. अमृतचन्द्र छात्रावास, राजा श्रेयांस भोजनालय, आ. समन्तभद्र चिकित्सालय, पं. टोडरमल विद्वत् निवास, पं. बनारसीदास सभा भवन, पं. दौलतराम विद्वत् निवास एवं ब्राह्मी-सुन्दरी सरस्वती निलय का शिलान्यास क्रमश: भबूतमलजी भण्डारी, अनन्तभाई ए. सेठ, धूलजी महीपालजी ज्ञायक, डॉ. बासन्तीबेन शाह, नरेशजी एस. जैन, देवीलाल कस्तूरचंदजी शाह, प्रेमचन्दजी बजाज, जीतमलजी परिवार एवं जबेरचन्दजी हथाया परिवार ने किया।

अकलंक शिक्षण संस्थान के छात्रों ने इस अवसर पर एक तत्त्व गोष्ठी का भी आयोजन किया, जिसकी अध्यक्षता श्री जयन्तीलालजी दोशी ने एवं संचालन श्रीमती ममता जैन ने किया। छोटे-छोटे बालकों एवं दाहोद महिला मण्डल की सदस्यों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम भी कराये गये।

गणमान्य अतिथियों में ब्र. बसन्तभाई दोशी, श्री अमृतभाई मेहता, श्री सुमनभाई दोशी, श्री ताराचन्दजी, श्री राजमलजी गोदडोत, श्री कचरुलालजी मेहता आदि उपस्थित थे।

इस अवसर पर ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित **ध्रुवधारा** पत्रिका के प्रथम अंक का विमोचन भी किया गया। सम्पूर्ण कार्यक्रम का संयोजन एवं संचालन पण्डित राजकुमारजी शास्त्री ने किया। **– वीरेन्द्र ज्ञायक**

वैराग्य समाचार

1. श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक एवं वीतराग-विज्ञान एवं जैनपथप्रदर्शक के प्रबन्ध सम्पादक पण्डित जितेन्द्र वि. राठी की मातुश्री सौ.ऊषादेवी विट्ठलदासजी राठी का दिनांक 6 दिसम्बर, 2004 को णमोकार मंत्र स्मरण करते हुये शान्त परिणामों से पारशिवनी (नागपुर) में देहावसान हो गया। आप सरलस्वभावी, स्वाध्याय प्रिय एवं धार्मिक विचारों की महिला थीं।

ज्ञातव्य है कि आपको अनेक वर्षों से ब्लड कैंसर था। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक समिति को 1101/-रुपये प्राप्त हुये हैं।

2. इन्दौर निवासी श्री बिरधीचन्दजी पहाड़िया का दिनांक 16 नवम्बर को समताभावपूर्वक पाठ स्मरण करते हुये देहावसान हो गया है। आप विगत 50 वर्षों से नियमित स्वाध्याय सभा में आया करते थे। मुमुक्षु मण्डल से होनेवाले सभी कार्यक्रमों में आपका सहयोग बराबर बना रहता था। आपकी स्मृति में आपके सुपुत्र राजेन्द्रकुमार, धनकुमार पहाड़िया द्वारा जैनपथप्रदर्शक को 200/-रुपये प्रदान किये गये।

3. गुवाहाटी निवासी श्री झूमरमलजी पाण्ड्या का दिनांक 23 नवम्बर को प्रात: स्वर्गवास हो गया है। आप सरलस्वभावी एवं स्वाध्यायी थे।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही जन्म-मरण का अभावकर मुक्ति को प्राप्त हों – यही मंगल कामना है। **ह्न प्रबन्ध सम्पादक**

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) दिसम्बर (द्वितीय) 2004
J. P.C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा,**डबल एम.ए. जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन तथा इतिहास एवं **पं. जितेन्द्र वि.राठी,** शास्त्री
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें –
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127